''वे वहाँ कैद है'' उपन्यास में साम्प्रदायिक द्वेष की विभिषिका

शोधकर्त्री–नीति
(हिन्दी–विभाग)
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय
रोहतक।
मों0–7015063779
रजि0 नं0–07-GVM-167

सारांश-

नफरत और उन्माद स्वस्थ समाज के सकारात्मक विकास की बहुत बड़ी बाधाएं है। और दुर्भाग्यवश आज इन्ही टीलों पर बैठकर हम विकास के दोनो ओर प्रतिमानकों को गठ–सराह रहे है। नफरत और उन्माद सर्वभक्षी भूख की तरह चहुँ ओर फैला कर सबसे पहले विवेक को लीलती है। फिर मनुष्यता ओर नागरीक समाज की अवधारणा को राजनीति धर्म और पूँजी की ताकतों पर टीक कर साम्प्रदायिक दंगो के रूप में जब तक उभरते हुए अपने को अपराजय करती चलती है। जाहीर है साम्प्रदायिकता अपने आप में एक समस्या नही, रोग–ग्रस्त व्यवस्था को छिनने का बाहरी लक्षण है। चूंकि रोग का निदान रोग की स्वीकृति और निःसंग जांच और उपचार के बिना संभव नही, इसलिए आज के दौर मे पूरे भारतीय समाज व साम्प्रदायिकता विद्वेष की चपेट मे ले जाने वाली युगीन साम्प्रदायिकता का विश्लेषण जरूरी है।

मुख्य शब्द : *अवधारणा, उन्माद, उपन्यास, धार्मिक, प्रतिमानक, साम्प्रदायिकता*

प्रस्तावना-

''वे वहॉ कैद है'' उपन्यास में उपन्यासकार ने बड़ी हर संवेदनशील भाषा मे साम्प्रदायिकता और उसके भीतर पनपते फांसीवाद के भयानक चेहरे को उभारने का प्रयास किया है। इस उपन्यास में साम्प्रदायिकता की समस्या और संदर्भो को बहुत गहराई से हमारे समक्ष प्रस्तुत किया है। साम्प्रदायिकता के बारे मे बात करने से पहले हमे उसके अर्थ को समझना बहुत आवश्यक है, तभी हम साम्प्रदायिक द्वेष की विभिषिका को समझ पाएगें। साम्प्रदायिकता शब्द 'सम्प्रदाय शब्द से बना है और सम्प्रदाय शब्द ''दा धातु मे सम् व ''प्र'' उपसर्ग तथा धन् प्रत्यय लगने से साम्प्रदायिकता शब्द बना है जिसका अर्थ है– किसी विशेष सम्प्रदाय से सबंध रखने वाला।

प्रख्यात आलोखक प्रोफेसर रोहिणी अग्रवाल साम्प्रदायिकता को संकीर्ण मानसिकता की उपज मानती है। उनके अनुसार–''असल में साम्प्रदायिकता द्वेष कुछ ओर नहीं, व्यक्ति की उसी संकीर्ण असहीष्णु मानसिकता का प्रतिपलन है जो समान धर्मीयों मे जातिगत वैमनस्य और विधर्मीयो मे पहचान पाता है।''

विसेंट स्मिथ को शब्दो मे ''एक साम्प्रदायिक व्यक्ति समूह वह है, जिसके दिल अन्य समूहों से प्रथक होते हैं और उनके विरोधी भी हो सकते है। ऐसे ही व्यक्ति अथवा समूह की विचारधारा को 'सम्प्रदायवाद' या 'साम्प्रदायिकता कहा जाएगा।।

भारत कें संदर्भ में साम्प्रदायिक आस्था को हिंदुत्व के गौरव की तरह पहचानना कंठिन है। सांप्रदायिकता चूंकि एक गाली है, इसलिए कोई अपनी पहचान प्रत्यक्षतया सांप्रदायिक शख्सियत के रूप मे नही चाहता, लेकिन ह्रदय के भीतर पलत मुस्लिम विरोधी मानसिकता उसे अनायास विवेकशील मुकम्मल इंसान के मानको से गिरा देती है। औसत भारतीय ईमानदारी के प्रबल आवेग में, स्वीकार करता है कि वह मुस्लिम समुदाय को संदेह और हेय दृष्टि में देखता है। इसके ठीक विपरीत क्रिश्चियन समुदाय का हर गोरा उसकी दृष्टि मे श्रेष्ठ, सम्मानीय, बुद्धिमान और अनुकरणीय है। दोनों ही पूर्वधारणाएं जन्म के साथ उसके मानस में घर कर लेती है। जिनके औचित्य को तमाम तर्क बुद्धि के सहारे वह सिद्ध नही कर पाता। दरअसल साम्प्रदायिक विद्वेष समाज मे फैलने – फूटने से पहले व्यक्तिमानस की कोमल–नर्म जमीन को आक्रांत करता है, मनुष्य को नर–पशु में तबदील करने के बाद ही बाहर अपना तांडव नृत्य करता है। इसलिए साम्प्रदायिकता की समस्या जितनी गलोबल और राजनीतिक और सांस्कृतिक है, उतनी ही कहीं मनोवैज्ञानिक और व्यक्तिपरक भी है।

इस उपन्यास में साम्प्रदायिकता की समस्या और संदर्भो को बहुत गहराई से हमारे समक्ष प्रस्तुत किया है। देह विभाजन के बाद हिन्दु मुस्लिमों मे परस्पर कटुता, द्वेष और नफरत की भावना बढ़ गई।

''वे वहॉ कैद है'' नामक उपन्यास विभिन्न शहरों में हिन्दु–मुस्लिम साम्प्रदायिकता को यथार्थ के धरातल पर विश्लेषित करता है। ज्योतिष जोशी के शब्दों मे कहे तो ''वे वहॉ कैद है'' (1994) मे प्रियंवद ने हिन्दु–साम्प्रदायिकता के उभार ओर उसके दुष्परिणामो को दिखाते हुए रेखांकित करने की कोशिश की है कि इसके पीछे एक बड़ा वर्ग राजनीतिक ओर आर्थिक लाभ उठाने के लिए तत्पर रहता है। प्रियंवद ने साम्प्रदायिक उभार को मनुष्यता विरोधी मुहीम के रूप मे देखा है, और उसकी चर्म परिणति में बर्बरता की छाया देखी है। इस बर्बरता के सूत्रधार चिन्मय है, जो धीरे–धीरे उग्र हिन्दु नेता के रूप में उभरता है। और सारे शहर को हिन्दु आक्रामकता से भर देता है।

भारत एक धर्म निरपेक्ष राष्ट्र है। इस देश के प्रत्येक मनुष्य को यह अधिकार है कि वह किसी भी धर्म को अपना सकता है। किन्तु मनुष्य के अलग–अलग धर्म मानने के कारण मानव मन में धार्मिक अलगाव की भावना घर कर चुकी है। परिणाम स्वरूप समाज में धार्मिक द्वेष अपने पैर पसार चुका है। इस उपन्यास का प्रमुख पात्र चिन्मय इसका एक ज्वन्त उदाहरण है। वह एक हिन्दु नेता है। हिन्दू धर्म का वक्ता है। उनका कहना है कि हिन्दु राष्ट्र के निर्माण के लिए लोगों के मन में साम्प्रदायिकता की भावना को जगाना चाहिए। इसके लिए वह लोगो के बीच त्रिशूल बॉटने की तैयारियॉ करता है। हिन्दू धर्म के समर्थन में, हिन्दू धर्म को बचाने के लिए बन्द का आह्वाहन करता है। उनका कहना था–''बहुत से हिन्दू आजकल जान–बूझकर मांस खाने लगे है..... शराब पीने लगे है जिससे हिंसा का मुकाबला हिंसा से कर सके। बुनियादी तौर पर हिन्दु हिंसक नहीं होता, करूणा होती है और उसके मन मे। यह सब खाने से करूणा मर जाती है। इसलिए ''चिन्मय किसी भी तरह लोगों के मन में साम्प्रदायिकता की आग जला सके ताकि उसके दल के लोग आसानी से हिन्दू राष्ट्र की स्थापना कर सकें। उपन्यास में चिन्मय अनेक स्थानो पर हिन्दू राष्ट्र का समर्थन करते है। जब कुछ गुण्डों ने दादू को अपमानित किया तथा चिन्मय ने उनपर हमला किया, और उसने इसे अविनाश को बताया, तब उनके बीच लम्बी बातचीत होती रही। इस दौरान उसने अविनाश को बताया कि ''अब अगला चरण पूर्ण हिन्दू राष्ट्र निर्माण का है..... शायद लोग मारे भी जाएं पर वह दिन हिन्दू राष्ट्र की नींव का दिन होगा।'' उपन्यास में एसे कई सन्दर्भ है, जिससे पता चलता है कि चिन्मय अपने देश को हिन्दू राष्ट्र बनाने के लिए लगा हुआ है। एक बार चिन्मय जब अविनाश के घर रूका था, तो वह देर रात तक हिन्दू राष्ट्र की बाते करता रहा था– ''हिन्दू राष्ट्र का स्वरूप ..... जातियों .... उपजातियों..... अल्पसंख्यकों या दूसरे धर्मो की क्या स्थिति होगी उसमें.....। ऐसा राष्ट्र जब बनेगा और ऐसी राष्ट्रीयता जागेगी तब हमारा चरित्र बनेगा।''

देश के विभाजन के साथ–साथ हिन्दू मुस्लिम समाज भी परस्पर भावनात्मक स्तर पर बंट गया था। हिन्दू और मुस्लमानों के मन मे एक दूसरे के प्रति द्वेष एवं घृणा की भावना पार कर चुकी थी। फलस्वरूप हिन्दू मुस्लमान को और मुस्लमान हिन्दू को मारने काटने के लिए तैयार रहते है। इस उपन्यास में सुक्खी बाबू, गुठली और मसूद इसके उदाहरण है। सुक्खी बाबू और मसूद की दुश्मनी का कारण उनका हिन्दू होना और मुस्लमान होना था। उनकी यह दुश्मनी व्यक्तिगत न होकर जातिगत थी। दोनो ही साम्प्रदाय साम्प्रदायिक वे वैमनस्य फैलाने मे लगे है। दोनो ही सम्प्रदाय के व्यक्ति इस बात पर जौर देते है कि विरोधी सम्प्रदाय उनके लिए खतरनाक हो रहा है, उनके हानि पहुंचाने की कोशिश कर रहा है। इसलिए उनके दमन का प्रयास करते है, चिन्मय इसी भ्रम में हिन्दुओं का पक्षधर बना रहता है कि मुस्लमानों ने उन्हें सैदव हानि पहुंचाई है। वह दादू को कहता है– ''मै सबसे पहले तैयार हूॅ धर्म छोडने के लिए पर आज कोई शासन कहे कि धर्म का सार्वजनिक प्रदर्शन उसी तरह अशलील समझा जाएगा जैसे सार्वजनिक संभोग कहे कोई कि सारे मंदिरों, मस्जिदों, गिरजों गुरूद्वारों को अस्पताल, अनाथालयों, स्कूलों में बदल दिया जाएगा। मैं सबसे पहले तैयार हूॅ। कहे कि पंड़ो, महंतो, मुल्लाओं और पादरियों को खेतों, कारखानों में जोत दिया जाएगा.....घोषणा कर दे कि धर्म किसी के कमरे से बाहर नहीं निकल सकता। जिस तरह बंद कमरे मे कोई अपनी पत्नी के साथ क्या करता है, कोई नहीं जानता, जानना भी नहीं चाहता, उसी तरह व्यक्ति ईश्वर के साथ भी करे। बंद कमरे मे जो चाहे, बस यहीं तक धर्म की स्वीकृति और अनुमति हो''।

इस बार दादू चिन्मय को समझाते है कि वह जिसे धर्म माने हुए है वह धर्म नहीं है। दादू सम्प्रदायिकता के दुष्परिणामों को भलीभांति जानते है। इसलिए हमे उन्मादी लडको को समझाते है कि वे हमेशा सीढियां रहे है, जिस पर चढकर दूसरो ने ही सफलता प्राप्त की है। उन्हें इस बात का दुख होता है कि लोग जानते हुए भी नहीं

समझना चाहते। चिन्मय को समझाते हुए उनके हृदय में चीत्कार व्यक्त होती है–''यह अधार्मिकता धीरे–धीरे एक बर्बर अंधेरी गुफा मे ले जाती है। मनुष्य को जहां खुली हवा मे सांस भी लेने दी जाती है। यह दिशा निश्चित है। धर्म यह जाति का महानता का उन्माद, नोट डाउन माई वर्डस, धर्म या जातीय महानता का। उन्माद सिर्फ एक बर्बर तानाशाही मे खत्म होता है। जिसे कुछ मूर्ख लोग या मूर्ख पुस्तके नियंत्रित करते है।'' दादू के अलावा अविनाश भी चिन्मय को समझाता है कि वे साम्प्रदायिक न बने। बल्कि उन्में मानवीय गुण होने चाहिए। जो प्रत्येक मनुष्य के रूप में स्वीकार करें। जैसे किसी अंधे को सडक पार करवाते समय कोई यह नहीं पूछता कि वह हिन्दू है या मुस्लमान और डाक्टर इलाज करने से पहले यह नहीं पूछता कि वह किस धर्म से सबंध रखता है। वैसे ही वे भी ''व्यक्ति'' को ''व्यक्ति'' को रूप मे स्वीकार करना सीखें। तभी स्वस्थ विचारधारा और सुदृढ़ राष्ट्र का निर्माण हो सकेगा। इन सब बाते से दादू की तरह अविनाश की अंर्तवेदना प्रकट होती है।

दरअसल प्रत्येक समुदाय एक दूसरे से भयभीत होकर एक दूसरे के लिए घातक हो जाता है। एक समुदाय की क्रिया के बदले दूसरा प्रतिक्रिया करता है। और दूसरे की प्रतिक्रिया का संदर्भ देकर पहले वाला और क्रियाएं करता है। फिर उन क्रियाओं की एवज में कई ओर प्रतिक्रियाएं होती है। यह कर्म अपनी जातीयता को बचाने के लिए निरंतर चलता रहता है। रामधारी सिंह दिनकर के शब्दों में – ''जब एक जाति भयानक रूप से सम्प्रदायिक हो उठती है, तब दूसरी जाति भी अपने आस्तित्व का ध्यान करने लगती है। और उसके भाव भी शुद्ध नही रह पाते। अच्छे से अच्छे हिन्दू को भी यह समझाया जाए कि मुसलमान तुमसे घृणा करते है, तो इस जहरीले आघात से वह अविचलित नही रह सकता। हिन्दुंओं मे साम्प्रदायिक की वृद्धि इसी प्रकार हुई है और जब हिन्दुओं मे साम्प्रदायिकता दिखाई पड़ी तब तक मुसलमानों की साम्प्रदायिकता और बढ गई और दोनो जातियों के बहुत से लोग परस्पर शत्रु हो उठे।'' इस प्रकार के हालात मे जो दंगे होते है, उन दंगो के शिकार वहीं होते है जो मजलूम है, जिनकी कोई सामाजिक हैसियत नही है। चाहे वे हिन्दू हो या मुसलमान।

उपन्यास मे चिन्मय और उसके साथी हिन्दु महाघोष के लिए प्रत्येक हिन्दू घर मे भगवे झंडे लगाने, हिन्दुओं को तिलक लगाने और रोज रात को 9 बजे एक साथ घण्टे, घडियाल व शंख बजाने का फैसला करते है तो उसकी प्रतिक्रिया स्वरूप अपनी जातियता की रक्षा के लिए मुसलमान भी हर घर में झंडे लगाने लगे और रात को 9 बजे मस्जिद मे अजान का निर्णय लेते है। दोनो सम्प्रदाय अपने अपने जातियता के प्रदर्शन के कारण साम्प्रदायिकता का वातावरण पैदा करते है। चिन्मय देश के लिए एक भाषा, एक कानून, एक न्याय स्थापित करना चाहता है। ताकि अपनी जातियता का वर्चस्व सिद्ध कर सके। वह दादू को कहता है– ''आने दिजिए सर एक धार्मिक राष्ट्र..... ..... एक भाषा, एक कानून, एक न्याय, एक धर्म, एक भावना पूरे राष्ट्र में होगी। अविश्वास मत किजिए सर। जैसे हम पिछडों को, हरिजनों को मुख्धारा में लाने के लिए 30 साल से लगे है, एसे ही लोग आने वाले सालों में एक मुख्य धारा राष्ट्र की होगी। और सब उससे जुडे होगें। धार्मिक राष्ट्र कोई पाप नहीं है। सर ..... एक चेतना, एक उद्देश्य, एक स्वर, एक चरित्र से सब मिलकर बठेंगे। और तब केवल जमीन का एक टुकडा और केवल एक भीड़ नही, एक सम्पूर्ण राष्ट्र होगें सर.....।

चिन्मय की आंख में जिस त्रिशूलधारी हिन्दू योद्धा का स्वप्न है वह मूलतः आतंकवादी है। आतंकवादी कभी मुक्तिदाता नही हो सकता। चिन्मय की भाषा है, ''मार पाऊँगा या नही' यह बाद की बात है, पर मार सकता हूँ यह भय पैदा करना जरूरी हो गया है, अब। ''इसी से उसके सपने बढते हैं जिसे साकार करने के लिए वे अपने अपने मार्ग को चुनते हैं किन्तु ''सबके सपने इतने चौडे थे कि दूसरों के सपनों को कुचलते थे। चिन्मय की मॉ के पास अतीत के वैभ्झव की ओर उसकी वापसी का सपना था, टीनू की ऑखों मे जलज मोहन्ती का सपना था, टीनू की ऑखों मे जलज मोहन्ती का, चिन्मय हिन्दू राष्ट्र के सपने देख रहा था। गुठली मसूद के अहाते का, मसूद के पास पाकिस्तान का सपना था, दादू के पास पाकिस्तान का सपना था, दादू के पास होप, प्रात की ऑखों में बिज्जू का और अविनाश की ऑखों में प्रातू का। अपने–अपने वृत्तों में सब कैद थे।' पर संघर्षरत, ये सपने ही थे जो सबको अलग–अलग रास्तों पर ले जाते हैं। दादू को आशावाद की ओर, तो चिन्मय को हिंसा, आतंकवाद की ओर।

परस्पर दमन की यह मनोवृति हमे किसी ओर लेकर नहीं जाती बल्कि हमे ओर अधिक अमानवीय बना देती है। इस संदर्भ मे दादू का चिन्मय से यह कहना बिल्कुल ठीक है–''यह बहुत गहरी और अंधी सुरंग है जिसमें घुस रहे हो तुम सब। एक बार जाने के बाद न वापस लौट पाओगे न आगे। इसका न कोई दूसरा सिरा मिलेगा न रोशनी न ताजी हवा..... इतिहास को देखो तो समझ लोगे। पूरी–पूरी सभ्यताओं को यह सुरंग निगल गई है

अपने अंदर।' मनुष्यता को लीलू जाने वाली यह हिन्दू उन्माद की हवा किसी को नहीं बख्शती। प्रियंवद ने सम्प्रदायवाद के खुले खेल को जिस बारीकी से रखा है, वह अद्भुत है, क्योंकि वह रचना के भीतर फूटा है। सब कुछ को खा जाने वाली यह पशुता बर्बर होती हुई ओर विकराल हो रही है। ओर हम चुप्पी साधे मानो उसके अगले कदम का इन्तजार कर रहे है।

निष्कर्ष-

निष्कर्ष रूप मे हम कह सकते है कि यह उपन्यास एक अर्थ मे मुस्लिम साम्प्रदायिकता और धर्मोन्माद का विरोध करता है। परन्तु इसी से हिन्दूत्व का उभार और दहशतवाद को जन्म मिलता है, जिसकी अभिव्यक्ति करने में प्रियवंद सफल रहे है।

सहायक ग्रंथ सूची–

1. डॉ0 यशवन्त विष्ट, साम्प्रदायिकता एक चुनौती और चेतना, पृ0–48
2. डॉ0, रोहिणी अग्रवाल, समकालीन कथा साहित्यः सरहदें और सरोकार, पृ0–14
3. कर्ण सिंह सोमरा, साम्प्रदायिक सद्भाव एवं राजनीतिक चेतना, पृ0–44
4. ज्योतिष जोशी, उपन्यास की समकालीनता, पृ0–94
5. रामधारी सिंह दिनकर, संस्कृति के चार अध्याय, पृ0–618